Impact Factor-6.261

ISSN-2348-7143

INTERNATIONAL RESEARCH FELLOWS ASSOCIATION'S

RESEARCH JOURNEY

Multidisciplinary International E-Research Journal

PEER REFREED & INDEXED JOURNAL

February-2019

SPECIAL ISSUE

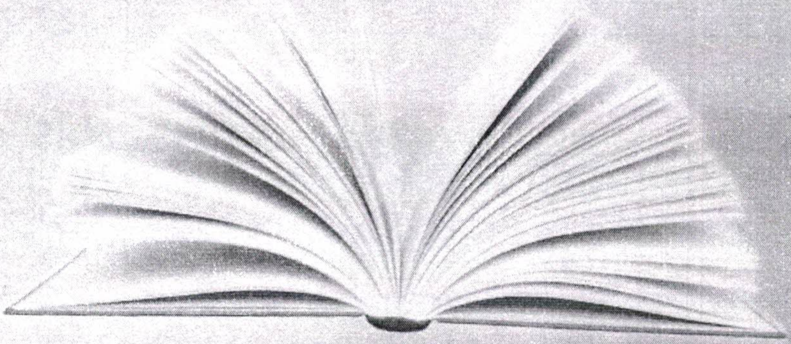

इक्कीसवीं सदी का हिंदी साहित्य :
संवेदना के स्वर

Guest Editor

Dr.Archana Pardeshi

Dr.Rameshwar Bangad

Dr.Avinash Jadhav

Chief Editor

Dr.Dhanraj T.Dhangar

Assist.Prof.(Marathi)

MGV'S Arts & Commerce College, Yeola,
Dist.Nashik (M.S.)

Scanned by CamScanner

16	'अल्मा कबूतरी' उपन्यास में आदिवासी विमर्श – डॉ. व्यंकट किशनराव पाटील	62
17	नारी का बदला हुआ रुप : एक विवेचन – प्रा.डॉ.एस.एस.कदम	64
18	इक्कीसवीं सदी के काव्य में स्त्री और संवेदना – डॉ.उर्मिला भिकाजीराव शिंदे	69
19	नालासोपारा में चित्रित थर्ड जेंडर की मर्मान्तिक पीड़ा – डॉ चांदणी लक्ष्मण पंचांगे	71
20	संजीव के कथा साहित्य में आदिवासी विमर्श – प्रा. डॉ. पवार राजाभाऊ श्रीहरी	73
21	'21 वीं सदीं की हिन्दी कहानियों में स्त्री की वदलती दिशा'' – डॉ.दीपा राग	76
22	दलित चेतना – डॉ. विलास कांबळे	78
23	प्रवासी कहानी साहित्य में स्त्री–पुरूष संवंध : तेजेंद्र शर्मा की कलम से – सहा.प्रा. अमर आनंद आलदे	80
24	'संजीव के उपन्यासों में आदिवासी जीवन' -प्रा. जाधव जे.वी.	85
25	वैश्वीकरण के परिप्रेक्ष्य में उदय प्रकाश का साहित्य – प्रा.युवराज राजाराम मुळये	88
26	जहीर कुरेशी की ग़ज़लों में मानविय संवेदना के स्वर' –प्रा. भेंडेकर एन.एस.	93
27	इक्कीसवीं सदी में आदिवासी कविताओं में कवयित्रियों – प्रा.कांबळे एस.एस.	96
28	आज भी खरे हैं तालावष एक प्रेरणास्त्रोत – प्रा.महेश नाना भोपळे	99
29	संजीव – के ''खोज'' कथा संग्रह में – संवेदना. –प्रा. अविनाश वी. अहिरे	105
30	डॉ. सी.वी. भारती की कविताओं में दलित जीवन का चित्रण – प्रा. शिंदे संतोष	109
31	इक्कीसवीं सदी की हिंदी कहानियों में स्त्रियाँ – प्रा. शेख साबेर	112
32	दूधनाथसिंह के 'आखिरी कलाम' उपन्यासों में व्यक्त समस्याएं – नदाफ अजद्दोरीन	116
33	सुषिला टाकभौर की कविता ; संवेदना के स्वर – गन्नाडे रमा धनराज	118
34	नासिरा शर्मा कृत उपन्यास 'अक्षयवट' में व्यक्त सामाजिक – वानखेडे विलास कोंडीबा	122
35	इक्कीसवीं सदी के कथा साहित्य पर शिवानी की स्त्री –प्रा. शेख गणी गफुरसाहेव	125
36	मिथिलेश्वर के कहानी में नारी विमर्श – किशोर श्रीमंत ओहोळ	128
37	इक्कीसवीं सदी के महिला उपन्यासकारों के उपन्यासों – श्रीहरी पंढरीनाथ गुट्टे	130

Scanned by CamScanner

जहीर कुरेशी की ग़ज़लों में मानविय संवेदना के स्वर

प्रा. भेंडेकर एन.एस.
कला, वाणिज्य व विज्ञान महाविद्यालय, गंगाखेड

आज इक्किसवीं सदीं में आदमी–आदमी से दूर होता जा रहा है। प्यार, अपनापा, बंधुत्व, ममत्व के स्थान पर कठोरता, स्वार्थपरकता, द्वेष, आत्मकेंद्रित वृत्ती अधिक मात्रा में पनप रही है। शहरों की चकाचौंध ने आम इंसान को इतना आकर्षित किया कि, वह गाँव की आबोहवा छोड, इस चकाचौंध के पिछे दौड़ने लगा। परिणामतः परिवार विघटन की समस्या उत्पन्न हुई। कल और आज की स्थितियों पर विचार किया जाये तो आज परिवार की व्याख्या इतनी सीमित बन गयी कि, माता–पिता, भाई–बहन, दादा–दादी या अन्य रिश्तेदारों को इसमें कोई स्थान ही दिखाई नहीं देता। आस्था के स्थान पर अनास्था, विष्वास के स्थान पर अविष्वास पनपने लगा। परिणामतः आज का मानव आत्मकेंद्री, स्वार्थी बनता चला गया। ऐसे माहौल में मानविय संवेदना का उभार तो न के बराबर ही पाया जायेगा।

पारिवारिक विघटन की समस्या ने तो संयुक्त परिवार के रीढ़ की हड्डी को ही तोड़ दिया है। जिसके चलते पारिवारिक संघटन, एकता का ह्रास हो रहा है। पारिवारिक लढ़ाई–झगड़े, आपसी मन–मुटाव, स्वार्थ केंद्रीत प्रवृत्ती आदि के कारण आदमी–आदमी से, अपने–अपनों से दूर जा रहे हैं। अजिविका का प्रष्न, खुली आज़ादी, स्वतंत्रता तथा मैं, मेरा आदि व्यक्ति में पनपती भावनाओं के कारण मानविय संवेदना लुप्त होती जा रही है। जिस कारण आस्था का स्थान अनास्था ले रही है, प्रेम–प्यार के स्थान पर आपसी मनमुटाव पनप रहा है। इस कारण दिन–ब–दिन मानव आत्म केंद्रीत बनता जा रहा है।

आधुनिकता के चलते आज का मानव अनेक स्वःनिर्मित समस्याओं से घिरा हुआ दिखाई देता है। अर्थोपार्जन हेतु आज के स्त्री–पुरूषों का घर–परिवार से बाहर कदम रखना यह तो आम है किंतु जिसके चलते अनेक समस्याएँ उत्पन्न हुई हैं। ऐसी समस्याओं को भी लोग बड़ी सहजता के साथ कृत्रिम दिखावे के रूप में जीवनयापन करने का प्रयास करते हुये दिखाई देते है। एक स्थान पर जहीर कुरेशी जी ने लिखा है–

"आँसुओं की धारा को बन्दी बना लेते हैं लोग
ये करिष्मा है कि फिर भी मुस्कुरा लेते है लोग"1

इस आधुनिक युग में पारिवारिक आपसी मनमुटाव तो आम सी बात हो गई है, पर पहले आपसी मनमुटावों को घर की चार दिवारी के भीतर ही सुलझा लिया जाता था। लेकिन, आज वह स्थिति नहीं; आपसी मनमुटाव चार–दिवारी को लाँघकर सड़कों पर आ गये हैं। अपने अपनों के ही खून के प्यासे बनते जा रहे है। अधिकार लिप्सा की भावना ने अपने–पराये का भेद ही खत्म कर दिया और खून के रिष्तों में एक ऐसी दरार निर्माण होने लगी, जिसके कम होने के असार न के बराबर है। 'मुखर होने लगी अनबन की बातें' में कुरेशी जी इसी बात को उद्घाटित करते है–

'मुखर होने लगी अनबन की बातें
सड़क पर आ गई आँगन की बातें"2

आज के समय में अर्थप्राप्ति हेतु काम करना यह तो आम बात है। इसके चलते पति–पत्नि दोनों अर्थोपार्जन के लिये कार्य करते दिखाई देते हैं, किंतु सदियों से चली आयी पुरूषी सत्ता के चलते कई बार पुरूषी अहंकार उभरकर आता है। परिणामतः पारिवारिक लड़ाई–झगड़े होना स्वाभाविक है। स्त्री–पुरूष दोनों दिन भर मेहनत कर जब थक कर वापस घर लोटते है, तो छोटी–छोटी बातों पर नोंक–झोंक आये दिन होती ही रहती है कि, घर के काम का ठेका अकेली महिला ने ही नहीं उठा रखा है, पति को भी इसमें हाथ बटाना चाहिए। पर हर जगह ऐसा संभव नहीं, परिणामतः ऐसे परिवारों में वैचारिक मतभिन्नता होना स्वभाविक है। इसी प्रकार की पारिवारिक स्थिति का चित्रण करते हुये ग़ज़लकार एक स्थान पर लिखते है–

"रसोई में झगड़ते ही है बर्तन
यही है यार, हर घर की कहानी"[3]

Scanned by CamScanner

ISSN : 2348-7143
February-2019

किसी ने सच ही कहा है, 'औरत दलितों में भी दलित है'। इसकी प्रतिति आज के समय में भी आती है। साधरणतः हम कितने ही अधुनातन क्यों न बने, परंतु हमारे भीतर आज भी कईं सदियों पुराने दकियानुसी संस्कार घर बनाये हुये हैं, जिन्हें हम चाह कर भी त्यागते नहीं। समाज में स्त्री–पुरूष समानता होने के बावजुद भी कई बार स्त्रीयाँ अन्याय अत्याचार की शिकार बनती है। हमारे मनोजगत में स्त्रीयों के प्रति जो चुल्हा, चौका और बच्चों की भावना है, सोचकर भी हम इस सोच में परिवर्तन नहीं कर पाये हैं। यही वह प्रमुख कारण है कि जिसके चलते आज भी कई स्त्रियाँ इस प्रकार की पुरूषी मानसिकता का षिकार बनती जा रही है। प्राकृतिक रूप से स्त्री कोमल, सुकुमार है और पुरुष ताकदवर है तथा पुरूषप्रधान संस्कृति; जिसके चलते आये दिन घर, परिवार, समाज में स्त्रियाँ पुरूषों द्वारा किये गये अन्याय–अत्याचार का षिकार बनती हुयी नजर आती है। ऐसी ही स्थितियों का प्रतिपादन करते हुये ग़ज़लकार एक स्थान पर लिखते हैं–

"निर्बल कोई भी हो, औरत, हरिजन अथवा शीषमहल
निर्बल पर ताकतवर ने, हर युग में, अत्याचार किया"[4]

आज सामाजिक जीवन हो या पारिवारिक जीवन, व्यक्ति की सोच वदली हुयी दिखाई देती है। वह आत्मकेंद्री बन गया है। कल और आज की बात की जाये तो यकिनन आज से कल वेहतर था, यह निःसंकोच कहना पडेगा। इसके पिछे अनेक कारण दिखाई देते हैं, जिनमें प्रमुख रूप से कल जो परिवार की संकल्पना थी वह आज समग्र रूप से बदल गयी है। आज संयुक्त परिवार का स्थान स्वतंत्र परिवार ने लिया है। परिणामतः व्यक्ति को विविध प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। परिवारों का आकार छोटा बनता जा रहा है। जिसमें पती–पत्नि और वच्चें इनके अलावा किसी तिसरें के लिये स्थान तो न के बराबर है। परिणामस्वरूप आत्मियता, अपनापन लुप्त सा हो गया है। महानगरों की चकाचौंध और तेज तर्रार जीवन की दौड़ ने मानव की जीवन शैली पर इतना असर ड़ाला है कि, कई बार वह स्वयं के लिये भी समय निकाल नहीं पाता। दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि, आधुनिकता और शहरों की चकाचौंध ने मानवी जीवन वहुत ही प्रभावित किया है। वह अपने ही परिवार के सुख को भी भूल बैठा है। इसी प्रकार की स्थिति को उजागर करते हुये ग़ज़लकार एक स्थान पर कहते है–

"ये महानगरीय जीवन का करिश्मा है
भूल वैठे हम सुखी परिवार की भाषा"[5]

एक ओर उपरी स्थिति है तो दुसरी ओर मानव की दौड़, अपनी पहचान बनाने के लिये भी है। इसके लिये वह दिन–रात एक कर अपनी पहचान बनाने में लगा हुआ है। जिसके चलते उसकी तथा उसके परिवार की सुख–शांति भी कई वार तहस–नहस हुई है। लक्ष्य का पीछा करते–करते वह कई अपनों कों पिछे छोड़ गया और जव लक्ष्य प्राप्ति हुई तो, साथ में जिसे अपना कहा जा सके कोई नहीं है। यह स्थिति महानगरीय जीवन में कम अधिक मात्रा में पाई जाती है, जिसमें दिन–ब–दिन बढ़ौत्तरी हो रही है। दो पिढ़ियों के वीच उत्पन्न मतभिन्नता तथा अपने लक्ष्यं का पिछा करने वाले व्यक्ति की मानसिकता का चित्रण ग़जलकार ने कुछ इस प्रकार किया है–

"अपनी पहचान बनाएँगे स्वयं के बल पर
हम नहीं उनकी तरह साँचों में ढलने वाले"[6]

वर्तमान समय की दौड़ ने मानवी जीवन को अनेक स्तरों पर प्रभावित किया है। एक तो परिवार की संकल्पना बदल गई, परिवारों के आकार दिन–व–दिन छोटे बनते गये। इस प्रकार की स्थितियों ने अनेक नई समस्याओं को जन्म दिया। इनमें से एक प्रमुख तथा भयावह समस्या है–वृद्धों की। एक तो परिवार का आकार वहुत छोटा, आस–पास कोई सगे सवंधी भी नही। इस कारण जैसे ही बच्चे वड़े हो जाते हैं, वें आजीविका हेतु देश से विदेश जा बसते हैं। ऐसे में प्रश्न यह उपस्थित हो होता है कि, माता–पिता की देखभाल कौन करें ? और जो एक बार विदेश जा वसें वे लौटकर वापस आये इसकी कोई शाश्वती नही रहती। इस कारण समाज में वृद्धों का प्रश्न भयावह वनता जा रहा है। ऐसी ही पारिवारीक जीवन की भयावह त्रासदी का चित्रण करते हुये ग़ज़लकार लिखते है–

"पंख मिलते ही पंछी उड़े पेड़ से
पेड़ अपनी जगह पर खड़ा रह गया"[7]

वर्तमान मानवीय जीवन पर दौड़–धूप का असर अधिक मात्रा में पाया जाता है। यह असर मानसिक रूप के साथ–साथ शारिरिक रूप से भी होता है। दिन भर की व्यस्तता और तनावों के कारण मानसिक

Scanned by CamScanner

थकान आना तो स्वाभाविक है किंतु उसका असर मानव के तन पर भी पड़ता है और मन पर भी। क्षमता से अधिक शारिरीक श्रम, दिन भर की दौड़–धूप, तनाव, अनिद्रा, सुख–शांति का अभाव, असमय भोजन आदि कई ऐसे कारण है, जिसके चलते व्यक्ति कई प्रकार की विमारियों का शिकार बनता जा रहा है। वर्तमान में मधुमेंह, रक्तचाप यह तो आम बिमारियाँ बन गयी है। जो इस प्रकार की जीवन शैली जिने वालों में आम तौर पर पाई जाती है। ऐसी ही स्थितियों की अभिव्यक्ति ग़ज़लकार के ग़ज़ल में कुछ इस प्रकार हुई है–

''घटे है तन मगर बढ़ गए है तन के रोग
हमारे दौर की बिमारियाँ बताती है''[8]

आज एक ओर पारिवारिक जीवन में अनगिनत समस्याएँ पायी जाती है, वहीं दूसरी ओर समाज जीवन भी अनेक कु–प्रभावों से ग्रसीत हुआ है। आज मानव जीवन में अनेक प्रकार की कु–प्रवृत्तियाँ पायी जाती है, जिस से आम जन–जीवन प्रभावित हुआ है। विशेषतः नारी पर ऐसी कु–प्रवृत्तियों का असर अधिक मात्रा में होता हुआ दिखाई देता है। जिस नारी को हम प्रेम–पुजा की देवी के रूप में पुजते हैं, उसी का आज घर से बाहर अकेले निकलना संभव नही है। क्योंकि मनोविकृती ने इस प्रकार घिनौना रूप धारण किया है कि, जिसके चलते कई निरापराध नारियाँ कुचली गई, कईयों का जीवन बरबाद हो गया। एक समय ऐसा भी था कि, लोग प्रेम–प्यार पाने के लिये आजीवन इंतजार करते थें, परंतु आज ऐसा दिखाई नहीं देता। राजा जयसिंह का ही उदाहरण ले, उन्हे अपनी नवोढ़ा पत्नी से इतना प्यार था कि, वे राज काज से दूर होते गये। परंतु बिहारी के 'नहीं पराग नही मधुर मधू' ने राजा को सचेत किया, उन्हें बोध हुआ और वे कली से फुल बनने का इंतजार करते रहें। परंतु आज कई मासूम कलियों को घिनौंने रूप में विकृत प्रवृत्तियाँ रौंदती जा रही है, कुचलती जा रही है। ऐसी ही भयावह स्थितियों कों भी ग़ज़लकार ने अपनी ग़ज़लों में चित्रित किया हुआ दिखाई देता है–

अंततः हम इतना ही कह सकते हैं कि, जहीर कुरेशी जी ने अपनी ग़ज़लों में जिस प्रकार से मानविय जीवन के विविध पहलुओं को अंकित किया है, वह आधुनिक जीवन की समसामायिकता के दृष्टि से सार्थक है। आज हम वर्तमान सदीं में जिस प्रकार से जीवन–यापन करते हुये अपनी ही समस्याओं के जाल में उलझते जा रहे हैं, जहाँ पर संवेदना, अपनत्व, प्यार, प्रायः लुप्त सा हो गया है, वहीं इनके स्थान पर स्वार्थी प्रवृत्तियों ने अपनी जड़े मजबुत कर ली है। संक्षेप में कहा जाये तो रचनाकार ने इक्किसवीं सदीं में जीवन यापन करने वाले मानविय जीवन के लगभग सभी पहलुओं पर प्रकाश ड़ालतें हुये आज का मानव किस प्रकार से विभिन्न प्रकार की त्रासदियों का शिकार बनता जा रहा है, इसकी सार्थक अभिव्यक्ति अपनी ग़ज़लों के माध्यम से की है।

1. Kavitakosh.org/kk/जहीर कुरेशी/भीड़ मे संबसे अलग–ग़ज़ल संग्रह/ऑसुओं की धारा को बंदी बना लेते है लोग

2.Kavitakosh.org/kk/जहीर कुरेशी/समंदर ब्याहने आया नहीं है– ग़ज़ल संग्रह/ मुखर होने लगी अनबन की बातें

3.Kavitakosh.org/kk/जहीर कुरेशी/चांदनी का दुःख–ग़ज़ल संग्रह/ यहाँ हर व्यक्ति है ड़र की कहानी

4.Kavitakosh.org/kk/जहीर कुरेशी/समंदर ब्याहने आया नहीं है– ग़ज़ल संग्रह/जब भी औरत ने अपनी सीमा रेखा को पार किया

5.Kavitakosh.org/kk/जहीर कुरेशी/चांदनी का दुःख–ग़ज़ल संग्रह/जीस जुवाँ पर चढ़ गई अधिकार की भाषा

6.Kavitakosh.org/kk/जहीर कुरेशी/समंदर ब्याहने आया नहीं है– ग़ज़ल संग्रह/सिर्फ चलना ही नही काफी, ओ चलने वाले

7.Kavitakosh.org/kk/जहीर कुरेशी/पेड़ तन कर भी नहीं टूटा–ग़ज़ल संग्रह/ जो भी कहना था वह अनकहा रह गया

Scanned by CamScanner